# मजलिस -5

**ज़ाकिर :** सफ़वतुल उलमा मौलाना सैय्यद कल्बे आबिद नक़वी रहमत मआब

वो सूरा जिसको हर नमाज़ में पढ़ना लाज़िम है और जिसके मुताल्लिक मैंने अर्ज़ किया कि हर मुसलमान पर वाजिब है कि इस सूरे को याद करे। बहुत अहमियत है कुरआन की तिलावत की और याद करना लेकिन ये कि किसी मोअय्यना सूरे के लिये ये नहीं कहा जा सकता कि इस का याद करना वाजिब है। लेकिन सूर–ए–हम्द वो है कि उसका याद करना हर मुसलमान के ऊपर वाजिब व लाज़िम है। इसलिये कि बग़ैर उसके नमाज़ हो ही नहीं सकती और मैंने इसीलिये उनवाने बयान क़रार दिया। ताकि जब हम तिलावत करें तो हमें अंदाज़ा हो कि हम क्या कह रहे हैं और उसकी बिना पर तवज्जो और खुज़ू व खूशू पैदा हो। पहली आयत बिस्मिल्लाहिर्रहमा निर्रहीम। चूँकि अर्रहमान अररहीम मुशतरक है लेहाज़ा उसी बयान के सिलसिले में जो सूर–ए–हम्द के ज़िम्न में अररहमानिररहीम आया है उसके मुताल्लिक भी आप हज़रात मुतवज्जे हो जायेंगें। शुरू करता हूँ मैं नाम से उस अल्लाह के जो रहमान भी है और रहीम भी है। ज़ाहिर है कि उस सिफ़त की क्या हद होगी कि जिस के लिये खुदा वन्दे आलम ये चाहता है कि कम से कम हर मुसलमान दिन में तीस मरतबा उस सिफ़त के साथ मुझे याद कर ले जैसा मैं अर्ज़ कर चुका हूँ कि बिमिल्लाह जुज़वे सूरा है लिहाज़ा जो सूरे पढ़े जायेंगें तो हर सूरे के साथ बिस्मिल्लाहिर्रहमा निर्रहीम कही जायगी। बीस मरतबा तो यही हो गयी और जब सूर–ए–हम्द पढ़ेगा इंसान तो वो जो इब्तेदाई दो रकअतें हैं उनमें भी सूर–ए–हम्द पढ़ना लाज़मी है। लेहाज़ा दस मरतबा ये हो गया तो तीस मरतबा कम से कम हर मुसलमान एक़रार करे कि मेरा पैदा करने वाला रहमान भी है और रहीम भी। ज़ाहिर है कि उसकी रहमानियत व रहीमियत का ज़हूर कायनात में हर तरफ़ है। सवाल ये पैदा हुआ और एक साहब ने पूछा भी था कि साहब यह तकरार क्यों है। दो मरतबा रहमान व रहीम की? पहले सूर–ए–हम्द ही इतना कि इस में खुलासा है कुरआन का तो ज़ाहिर है कि गुंजाइश नहीं कि तकरार करके लफ्ज़ों को बढ़ाया जाये क्योंकि जितना मुख़तसर किया जायेगा कलाम को उतने ही इज़ाफे कम होते जायेगें। लेहाज़ा सूर–ए–हम्द ही में कोई सवाल न था दो मरतबा रहमान अररहीम लाने का और फिर बिस्मिल्लाह तो निचोड़ है अब इसमें तो और कोई सिफ़त बयान ही नहीं कि गयी है। यहाँ पर तकरार की क्या ज़रूरत? बिस्मिल्लाहिर्रहमा निर्रहीम जबकि रहमान भी उसी रहमत से मुश्तक है जो मसदर है रहम भी उसी से मुश्तक है। रहमान व रहीम दोनों का मसदर रहमत है। मसदर और मुशतक जैसे आप के यहाँ उर्दू में भी होता है। आना, जाना, खाना ये तो मसदर कहलाते हैं अब इसी से और दूसरी चीज़ें बनती हैं। आना मसदर है आ रहा हूँ, आऊँगा, आये, आये थे, नहीं आये उन सब कि अस्ल क्या हुई आना, तो जिस तरह मसदर होता है अस्ल, उसी से लफज़ें बनती हैं उर्दू में भी और हर ज़बान में भी तो अरबी में रहमान व रहीम दोनों का मसदर क्या है? ''अररहमतो'' तो रहमत मसदर है, मगर इससे दो लफ्ज़ें क्यों लायी गयीं, रहमान भी और रहीम भी। हक़ीकत ये है कि अल्लाह की रहमत का ज़हूर दो अंदाज़ से होता

है एक उसकी रहमत जो आम है अपने तमाम बंदों के लिये चाहे उसको माने चाहे न माने। काफ़िर, मुशरिक, मज़हबी लोग लामज़हब। एक रहमत तो आम है हर एक के लिये चाहे वो कोई हो।

''ऐ करीमे कि अज़ खज़ानए ग़ैब
गबर व तरसा वज़ीफ़ा खुर दारी'

ऐ करीम ऐ वो करीम कि जिसके खज़ानऐ ग़ैब से यहूदी व नसरानी सब ही खा रहे हैं, ख़ैर यहूदी नसरानी तो मानते हैं बेदीन व मुलहिद जो उस का ऐक़रार ही नहीं करते, जो कहते हैं कि ये कायनात खुद ब खुद बन गयी है उसके लिये किसी पैदा करने वाले की ज़रूरत नहीं। इस इंकार के बाद भी फ़ैज़ पहुँच रहा है। तो एक रहमत है आम और एक रहमत वो है जो अपने मानने वालों के लिये उसने मख़सूस क़रार दी है। यहाँ वो फ़ुयूज़ व तौफ़ीक़ात जो मोमनीन को मिलती रहती हैं ''अल्लज़ीना जाहदू फ़ीना लनहदियन्नहुम सुबुलना''। तुम मेरी राह में कोशिश तो करो अपनी तरफ़ से सई तो करो '' लनहदियन्नहुम सुबुलना'' फिर देखो मैं अपने रास्ते की किस तरह तुम्हें हिदायत करता हूँ किस तरह तुम्हारी नज़रों से पर्दे उठते रहते हैं किस तरह तौफ़ीक़ाते इलाही शामिले हाल होती रहती हैं ''अल्लज़ीना जाहदू फ़ीना' जो मेरे बारे में जेहाद करते हैं। अब इस जेहाद से मुराद मैदाने जंग में आना नहीं बल्कि सई व कोशिश है जो मेरे बारे में अपनी तरफ़ से पूरी–पूरी काशिश करते हैं ''लनहदियन्नहुम सुबुलना'' तो यक़ीनन मैं अपनी राहों की हिदायत करता हूँ क्या मतलब इस का वो कोशिश करते हैं तो मैं हिदायत करता हूँ। इसका मतलब मेरी समझ में जो आया है वो ये है कि, तू है मुमकिन। मैं हूँ वाजिब, तेरा ज़हन है महदूद तेरी समझ है महदूद तेरा फ़हम है महदूद। महदूद में ला महदूद की समाई हो ही नहीं सकती। तू मुझ तक पहुँचना चाहे तो मंज़िल इतनी दूर है कि तेरे लिये मेरे दर तक रसाई मुमकिन ही नहीं। कहाँ एक फ़ानी बन्दा और कहाँ वाजिबुल वजूद? कहाँ एक महदूद इंसान और कहाँ वो लामहदूद ज़ात? मुमकिन और वाजिब में बड़ा फ़ासला है। तेरे बस में नहीं इस फ़ासले का तय करना। तेरे परे परवाज़ में दम नहीं कि तू बलन्द होकर मुझ तक पहुँच सके लाख कोशिश कर अपनी तरफ़ से कोई कोताही न कर लेकिन तेरे इमकान ही में नहीं कि मेरी सही और कामिल मारेफ़त हासिल कर सके। तेरा काम क्या है? बग़ैर कोताही के बग़ैर कमी के मुझ तक पहुँचने की कोशिश करना और जब तू अपनी तरफ़ से ख़ुलूसे दिल से कोशिश करेगा तो ये मेरी ही तौफ़ीक़ात होगी जो तुझे बलन्द करके राहे हिदायत तक पहुँचा देंगीं। अब मैं समझाने के लिये इसकी मिसाल दे दूँ। इसकी मिसाल ये है कि मैंने देखा कि मेरा बच्चा मेरा पोता पोती वो झूले में हैं और मुझ से मानूस हैं और मुझे देखकर हुमक रहे हैं। ये हुमकना क्या है ये उनकी ख़्वाहिश है कि मुझ तक पहुँच जायें। वो बच्चे बहुत कोशिश करेंगें मुझ तक पहुँचने की बहुत ज़्यादा हुमकेंगें तो इमकान गहवारे से गिर जाने का है। लेकिन उनके बस में मेरी आगोश तक पहुँचना नहीं, लेकिन होता क्या है कि जब मैं उनको हुमकते हुऐ देखता हूँ तो मैं खुद झुकता हूँ। बस यही मिसाल है ''जाहदू फ़ीना'' तुम अपनी तरफ़से मुझ तक पहुँचने की कोशिश करो तो तोफ़िक़ाते इलाही के हाथ झुकेंगें और तुम्हें बलन्द करके खुद अपनी मंज़िल तक पहुँचा देंगें।

तो ये वो तौफ़ीक़ात हैं जो मोमनीन के साथ मख़सूस हैं। कोशिश तो करो तुम, ये तौफ़ीक़ात कुफ्फ़ार से सलब हो जाती हैं। तो मालूम हुआ कुछ तो वो फ़ुयूज़ हैं कि जो मोमनीन से मखसूस हैं जो कुफ्फ़ार से सल्ब कर लिये जाते हैं। ये जो कहा गया है कि अल्लाह गुमराह कर देता है, अल्लाह हिदायत करता है तो उसमें ऐतेराज़ करता है कि उसने गुमराह कर दिया तो हम हिदायत क्यों कर पायें, जिसको चाहा उसने हिदायत कर दी वो पहुँच गया दूसरे वो जिनकी

न सिर्फ ये कि हिदायत ही नहीं की बल्कि "ज़ादाहुमुल्लाहो मराज़न" जिनके दिल में मर्ज़ है उनके मर्ज़ को अल्लाह और बढ़ा दिया करता है। तो अब उसने बढ़ा दिया मर्ज़ तो हम क्या करें। हक़ीक़त में उसका मतलब है तौफ़ीक़ात का सल्ब कर लेना । और ये तौफ़ीक़ात का सल्ब करना क्या है? मैं आप हज़रात के लिये नहीं बच्चों के लिये मिसाल से समझाता हूँ। दो लड़के हैं मेरे अल्लाह ने दिये हैं। अलहमदोलिल्लाह दोनों लड़के सईद व नेक हैं। मैं मसलन कह रहा हूँ। दो लड़के हैं मेरे एक लड़का तो बड़ा पढ़ने लिखने का शौक़ीन पूरी मेहनत करता है पढ़ने में और दूसरा लड़का दिल नहीं लगाता। लाख मैं कोशिश करता हूँ कि वो पढ़े। खेल कूद में लगा रहता है कोई तवज्जो करता ही नहीं, कुछ दिनों तक मैंने पूरी कोशिश की दोनों के लिये कि वो दिल लगा कर पढ़ें लेकिन हर कोशिश के बाद भी एक की तरफ़ से मैं मायूस हो गया। और दूसरे कि तरफ़ मैंने तवज्जो दी तो उसने भी पूरी कोशिश शुरू कि और वो और ज़्यादा तवज्जो से पढ़ने लगा। मेरे दोनों लड़के हैं और मुझे दोनों से मुहब्बत है मुझे दोनों से उलफ़त है। लेकिन अब जो पढ़ने लिखने की तरफ मुतवज्जे था मैंने उसके लिये कहा कोई उस्ताद भी रख लिया जाये स्कूल में पूरी तरह तालीम सही नहीं दी जाती है। इसके लिये मैंने किताबें भी मंगा दीं। अब मैं पूरी तरह कोशिश कर रहा हूँ कि जब वो पढ़ रहा है तो आख़री मंज़िल तक कमाल की मंज़िल तक पहुँच जाये। और वो जो लाख़ मेरी कोशिश के बाद भी तवज्जो तहीं करता तो मैंने कहा कि पैसा भी ज़ाया जायेगा अब उसको वहाँ से उठा के स्कूल से कालेज से मैंने किसी दर्ज़ी की दूकान पर बिठा दिया कि भय्या अब तुम यहाँ सिखो कुछ तुम कमा लोगे। लड़के मेरे दोनों हैं। मुहब्बत मुझे दोनों से बराबर है एक के लिये मैं तालीम की तरफ इतना मुतवज्जे क्यों हूँ? इसके लिये कोशिश क्यों है मेरी कि ज़्यादा से ज़्यादा पढ़ जाये और दूसरे को क्यों मैंने जो पढ़ा रहा था वो भी छुड़ा के दर्ज़ी की दूकान पर बिठा दिया। इस बिना पर नहीं कि उससे मुहब्बत कम है और इससे मुहब्बत ज़्यादा। ये इस बिना पर है कि मैंने देखा कि मेरी तमाम कोशिशों के बावजूद कोई हासिल नहीं। बस यही है तौफ़ीक़ात में इज़ाफ़ा हो जाना और तौफ़ीक़ात का सल्ब हो जाना। जिनकी तरफ से कोशिश होती है आगे बढ़ने की हिदायत हासिल करने की अल्लाह की तरफ से तौफ़ीक़ात बढ़ जाती है। और जो खुद हटते हैं उनसे तौफ़ीक़ात सल्ब कर ली जाती है कि जब तू कुछ कर ही नहीं रहा है तो बेफ़ायदा है तेरी कोई मदद करना।

तो वो रहमान भी है और वो रहीम भी है। एक रहमत है आम जो सब के लिये है मानने वाले हों न मानने वाले हों, दीनदार हों बेदीन हों, रहमते आम। जनाबे मूसा (अ0) कोहेतूर पर तशरीफ़ ले गये हैं और वहाँ बारगाहे इलाही में एतेराज़ नहीं बल्कि सवाल करते है। पालने वाले! फ़िरऔन तेरे मुकाबले पर उलूहियत का दावेदार, तेरे मुकाबले पर आ गया है कि मुझे सजदा किया जाये। कितने तेरे बन्दों को गुमराह कर दिया। ऐ मेरे मालिक मगर इसके बाद भी तू अपनी नेअमतों को सल्ब नहीं करता। इसी तरह वो तेरे दस्तरख्वाने रहमत से फैज़ हासिल कर रहा है। तेरी हवा में साँस लेता है। तेरे पैदा किये हुऐ पानी से प्यास बुझाता है जो तूने ज़मीन से गेज़ाऐं रूइदा कीं उनसे अपनी भूक मिटाता है। मालिक दामने रहमत को समेट ले ज़रा हवा को हुक्म देदे कि उसके लिये बक़ाए हयात का ज़रीआ न बने, पानी से कह दे प्यास न बुझाए गेज़ा को रोक दे कि उसके लिये ज़रीय–ए–बक़ा न बने। मालूम हो जायेगा। खुदाई का दावा चन्द मिनट में खुल जायेगा इधर जनाबे मूसा (अ0) यह कह रहे है और उधर नेदा यह आती है कि ऐ मूसा उसने अपनी बंदगी छोड़ दी तो क्या मैं अपनी रूबूबियत भी तर्क कर दूँ। ये उसकी कमज़र्फी है कि इतनी नअमतों के बाद

भी इंकार कर रहा है। ये मेरी रूबूबियत है कि इंकार के बाद भी दामने रहमत वसीअ है। (दौराने मजलिस बारिश होने लगी तो फरमाया) आप हज़रात को तो ज़रूर ज़हमत हो रही है बारिश से लेकिन ये ज़हमत–ज़हमत नहीं है बल्कि नज़ूले रहमत हो रहा है।

मैं अर्ज़कर रहा था कि दो तरह की रहमतें हैं। एक रहमत आम है मानने वालों के लिये भी और न मानने वाले के लिये भी। मोमनीन के लिये भी और काफिरों के लिये भी बस इसका सबूत यही बारिश है। ये अब्र जो बरस रहा है ये मोमनीन का घर देख कर नहीं बरस रहा है बल्कि जब बारिश होती है तो हर जगह होती है। मुझे मानो जब भी सेराब करूँगा। न मानो तब भी सेराब करूँगा। हर खेती सेराब हो रही है। मानने वाले की भी और न मानने वाले की भी। तो ये है वो रहमत जो आम है मानने वाले और न मानने वाले हर एक के लिये। और एक रहमत है ख़ास जो सिर्फ मोमनीन के लिये तो चूँकि दो तरह की रहमतें हैं लेहाज़ा। दो लफज़ें भी हैं। एक रहमान और एक रहीम। रहमान से मुराद है वो रहमत जिसका दामन वसीअ है सबके लिये चाहे मानो चाहे ना मानो और रहीम से मुराद है वो रहमत जो मखसूस है मोमनीन के लिये मगर जिसका सिलसिला यहाँ भी है और क़यामत तक क़ायम रहने वाली है बग़ैर मानने वालों से मख़सूस इसके लिये है लफ्ज़ रहीम। और वो रहमत जो सबके लिये आम है मानो चाहे न मानो उसके लिये है लफ्ज़ रहमान। शायद आप कहें कि ये दो अलग–अलग चीज़ें तो न हुईं? तो आपकी ख़िदमत में अर्ज़ कर दूँ कि कुछ अल्लाह के फैज़ वो हैं जो किसी अमल के बदले में नहीं जब अमल के बदले में नहीं तो फिर उसमें ये नहीं देखा जायेगा कि किस ने क्या किया मैं आपसे पूछता हूँ कि आज एक इंसान बड़ा इबादतगुज़ार बड़ा मोमिन बड़ा पारसा लेकिन जब वो बतने मादर से दुनिया में आया था तो उसने कितनीं इबादतें की थीं कितना कुरआन पढ़ चुका था कितनीं नमाज़ें पढ़ चुका था कितने रोज़े रख चुका था कोई अमल किया था? अभी तो कोई अमल नहीं किया। तो क्या अल्लाह ने नेअमतें नहीं दीं। ये कूवते बीनाई ये देखने की ताक़त किस अमल कि जज़ा में है। ये सुनने की कूवत किस अमल कि जज़ा में है। ये दिल ये दिमाग़ ये इंसान को इंसान बनाना ये वुजूद की नेअमत देना ये किस अमल कि जज़ा में है? ये ग़ेज़ा बतने मादर से बाहर आते ही सीन–ए–मादर में मुनासिब ग़ेज़ा का पैदा कर देना किस अमल की जज़ा में है? कुछ नहीं किया सब कुछ मौजूद। तो मालूम हुआ कि कुछ चीज़ें वो हैं जो सिर्फ हक़्क़े वजूद की बिना पर मिलती हैं। और चूँकि वजूद काफ़िर मुशरिक दोनों को मिला है लेहाज़ा उसमें कैद नहीं कि गई कि कौन मानने वाला है और कौन न मानने वाला है। तेरी ग़ेज़ा का इंतेज़ाम, तेरी साँस लेने का इंतेज़ाम, तेरे प्यास बुझाने का इंतेज़ाम ये तेरे हक़े वजूद की बिना पर है लेहाज़ा मुझे मान तब भी नेअमत मिलेगी न मान तब भी नेअमत मिलेगी।

लेकिन कुछ चीज़ें अमल कि जज़ा हैं। तो जो अमल करेगा उसको मिलेंगी जो अमल न करेगा उसको न मिलेगीं। मैंने मेहनत की पढ़ा लिखा और मैंने तालीम हासिल कर लिया और दूसरे ने नहीं पढ़ा लिखा जाहिल रह गया। आप कहें साहब ये जाहिल क्यों ये आलिम क्यों? जिसने मेहनत की उसको मिल गया इल्म जिसने मेहनत न की, उसको नहीं मिला इल्म। तो कुछ चीज़ें होतीं हैं वुजूद के हक की बिना पर और कुछ चीज़ें होतीं हैं अमल की जज़ा की बिना पर। काफ़िर खुद महरूम रहा क्यों मैदाने अमल में न आया ताकि इस फ़ैज़ को हासिल कर सके। तो उसकी महरूमी अल्लाह की तरफ़ से नहीं है उसके अमल न करने की बिना पर है। तुम नमाज़ न पढ़ो और अल्लाह देदे वही सवाब जो नमाज़ियों का है? तुम रोज़े न रखो और अल्लाह देदे वही सवाब जो रोज़दारों का है? तुम ज़कात न दो और अल्लाह देदे वही सवाब जो ज़कात

देने वालों का है? तुम खुम्स अदा न करो और अल्लाह देदे वही सवाब जो खुम्स अदा करने वालों का है? तुम अमले ख़ैर न करो और अल्लाह तुम्हें अमले ख़ैर करने वालों के बराबर क़रार देदे तो बताओ तुम्हारे साथ तो हो गया रहम लेकिन बेचारे अमल करने वाले के साथ ज़ुल्म नहीं हुआ? फिर उसने मेहनत क्यों की। तुम्हें मुफ्त में मिल गया उसको मेहनत के बाद मिला तो मालूम हुआ इसीलिये शर्त है कि मैदाने अमल में आओ। अमल करते जाओ मुझ से अज्र लेते जाओ मुझसे जज़ा लेते जाओ।

कोई कहे कि फिर उसका रहम क्या? मैंने जितना किया मिल गया। तो मैं कहूँगा कि पहले तो जज़ा देना ही रहम। ज़रा तवज्जो फ़रमायें जब से मैं लखनऊ में पैदा हुआ फर्ज़ कीजिये आज तक मैंने ज़िन्दगी में हकूमत का कोई कानून नहीं तोड़ा अब तक और इसके बाद अब मैं साठ बरस के सिन में बांसठ चौंसठ बरस के सिन में दरख्वास्त दूँ कि चूँकि इतने दिनों में आप के क़वानीन की जो पाबन्दी करता रहा लेहाज़ा इतनी मुददत में मैंने क़वानीन की जो पाबन्दी की उसका बदला दिलवाइये क्या कोई हमूमत क़वानीन की पाबन्दी करने की बिना पर कोई अज्र देती है? कोई बदला देती है? कोई जज़ा देती है? कानून तोड़ो सज़ा मिलेगी कानून पर अमल तो करना चाहिये तो कानून पर अमल की जज़ा नहीं कानून को तोड़ने की सज़ा है तो अगर तुमने क़वानीने इलाही पर अमल किया था तो हक्क़े जज़ा पैदा न होता कानून  पर अमल करते जाओ मुझ से जज़ा लेते जाओ। क्या ये रहम नहीं? और फिर इतना लेलो जितने के हक़दार हो एक नमाज़ पढ़ी है एक के बकद्र लो दो नमाज़ें पढ़ीं हैं दो के बकद्र लो वहाँ इरशाद है ''अशरए इमसालेहा '' कम से कम मैं दस गुना दूँगा और और ये दस गुना तो कम से कम। सत्तर गुना दूँगा। और सनाबिला फी कुल्ले सुनबोलातिन मातो हब्बतुन मिसाले इलाही है कि जैसे एक गेहूँ की बीज बो दो जिसमें सात बालियाँ आ जायें हर बाली में सौ दाने हों। किया एक, और मिले सात सौ। ये भी हददे आख़िर नहीं ''वल्लाहो युज़ाऐफो लेमइयशाओ'' अल्लाह जिसके लिये चाहे और बढ़ा दे। तो अब ये इज़ाफ़ए अमल की जज़ा में ये क्या है, ये है रहम। मैदान में आओ अमल करने के लिये। मेरे खज़ाने में कमी नहीं। तुम अमल करते जाओ मैं जज़ा देता चला जाऊँगा।

अब एक सवाल पैदा होता है कि पालने वाले तेरी नज़र में तो सब बराबर हैं तो फिर तूने ये कुरआान में क्या कह दिया किसी को दस गुना किसी को सत्तर गुना किसी को सात सौ गुना और किसी के लिये इरशाद हुआ ''युज़ाऐफुन'' और बढ़ा देगा और कितना बढ़ा देगा ये बताया नहीं यानी जितना चाहूँगा बढ़ा दूँगा। तो सब को बराबर से देता सभी को सत्तर गुना देता सभी को सात सौ गुना देता। नहीं हद नहीं मोअइय्यन नहीं, दस गुना, सत्तरगुना सात सौ गुना और बढ़ा दूँगा। मालिक ये क्यों? ये इसलिये कि ख़ाली वो अमल नहीं देखता बल्कि महले अमल भी देखता है और नीयते अमल भी देखता है। कि किस मौके और महल पर अमल किया। और ये देखता है कि किस नीयत से अमल किया। जैसा महल बदलता जायेगा वैसी जज़ा बदलती जायेगी, जैसी नीयत बदलती जायेगी वैसी जज़ा बदलती जायेगी।सामने की बातें अर्ज़ कर रहा हूँ। अमल किया, मैंने एक रूपया ख़र्च किया आपने भी एक रूपया ख़र्च किया। दुनिया में यही देखा जाता है कितना दिया। मेरे पास कुछ नहीं और मैं टिकट लेने के लिये स्टेशन पहुँचा और मैंने कानपूर का टिकट लिया तो मैं कहूँ चूँकि गरीब हूँ लेहाज़ा कम में दिया जाये टिकट। जी नहीं एक टिकट चाहे पैसे वाले हों चाहे गरीब। तो यहाँ देखा जाता है कितना? अगर अल्लाह भी यही देखता कितना? तो क्या ये अदले इलाही के खिलाफ़ न होता? मैंने दो रूपये दिये और एक साहब जो बहुत उमदा गाड़ी पर अमरीका से आयी हुई, तशरीफ लिये

जा रहे थे जिनकी रोज़ाना कि आमदनी थी दस हज़ार और एक साएल ने उनसे सवाल किया और उन्होंने भी जेब से निकाल कर दो रूपये दिये। अमल दोनों का बराबर है कि नहीं? दो रूपये मैंने भी दिये, दो रूपये उन्होंने भी दिये। अब अगर अल्लाह जज़ा दोनों को बराबर दे अमल देख कर तो क्या ये अदल होगा? मेरी दिन भर की पूरी कमाई का पांचवाँ हिस्सा था दो रूपये जो मैंने दिये और उनकी रोज़ की दस हज़ार की आमदनी  थी उसमें से दिये हैं दो रूपये तो ये कौथा हिस्सा हुआ? अब अगर जज़ा अल्लाह बराबर देदे तो उस ग़रीब के साथ हो जायेगा हक़ से ज़्यादा देना। तो कुदरत ने कहा मैं ये नहीं देखता हूँ। कि कितना दिया ये देखता हूँ कि किस महल पर दिया।

और ज़रा तवज्जो फरमायें अगर ख़ाली वो ये देखता कि नमाज़े कितनी पढ़ीं, एक शख़्स का सिन था बीस बरस का वो बेचारा जवानी में दुनिया से गुज़र गया और एक शख़्स की उम्र हो गयी नब्बे बरस। अब गिनये नमाज़ें किस की ज़्यादा। अरे पन्द्रह बरस के बाद बालिग़ हुआ। पाँच ही बरस तो मिले उसको। उस पाँच बरस में चाहे जितनी नमाज़ें पढ़ ले। वो इसके बराबर तो नहीं पढ़ सकता कि जिसको मिल गये हैं पछत्तर बरस, अस्सी बरस, उसने अस्सी बरस नमाज़ें पढ़ीं और उसने पाँच बरस नमाज़ें पढ़ीं। अगर अल्लाह गिन के देखे कितनी नमाज़ें तो फ़रयाद करेगा ये नौजवान क़यामत में, मालिक तू ही ने तो कम उम्र दी। मुझे भी इतनी उम्र दे देता मैं भी वैसी ही इबादत करता। तो नेदा आई मैं ये नहीं देखता कि कितना? मैं ये देखता हूँ किस महल पर मैं तोलता हूँ गिनता नहीं हूँ। एक सजदा भी इतना वज़नी हो सकता है जो ज़िन्दगी भर की इबादतों पर भारी हो। (सलवात)

और इसीलिये ये नहीं कहा गया कि मैं गिनूँगा। कयामत में गिना नहीं जायेगा तौला जायेगा गिनना होता है तादाद से मुताल्लिक, तौलना होता हौ कैफ़ियत से मुताल्लिक।

तो मालूम हुआ। वो वज़्न देखता है अदद नहीं देखता और वज़्न के माअनी क्या हैं? आज तो छोटे–छोटे बच्चे जानते हैं कि किस शय में कोई वज़न नहीं होता, वज़्न पैदा होता है कशिशे नक़्ल की बिना पर जितनी मरकज़ की कशिश ज़्यादा होती है उतना ही वज़्न ज़्यादा होता है इसीलिये अगर खला में पहुँच गये आप तो है वही चीज़ लेकिन बेवज़्न अब इसमें वज़्न नहीं क्यों? इसलिये कि मरकज़ की कशिश से निकल  गये हैं। आप चाँद पर पहुँच गये तो वही चीज़ जो यहाँ है छः मन की वो वहाँ रह गयी एक मन की क्यों? इसलिये कि वहाँ कशिशे नक्ल कम है तो मालूम हुआ वज़्न है कशिशे मरकज़ी का नाम। जिस शय में जितनी कशिश मरकज़ की तरफ़ ज़्यादा होती है उतना ही उसमें वज़्न ज़्यादा होता है तो अब आप वज़्न का राज़ समझ गये। कोई शय खुद वज़नी नहीं होती बल्कि वज़न कशिश की बिना पर पैदा होता है। अब मैं कहता हूँ कि माद्दी चीज़ों की कशिश है मरकज़े नक़्ल की तरफ़ और इबादतों की कशिश है मरकज़े इबादत की तरफ़ तो जितना इबादत में कशिश इधर पैदा होती जायेगी उतना ही वज़न बढ़ता जायेगा। तो ताज्जुब न करना अगर किसी की एक ज़रबत इबादते सक़लैन से भारी हो जाये इसलिये कि जितनी कशिश बढ़ जायेगी। उतना ही वज़्न बढ़ जायेगा। (सलवात)

वो सिर्फ़ एक ज़रबत है मगर इबादते सक़लैन से भारी ''ज़रबतो अलीयिन यौमल ख़ंदके अफ़ज़लो मिन एबादतिस सक़लैन'' अली (अ0) की एक ज़रबत ख़न्दक वाली, इबादते सक़लैन से भारी। क्या कहना उस जेहाद का जब अली (अ0) चले हैं तो एक शरफ़ लेकर और जब पलटे हैं तो एक फ़ज़ीलत का एलान। चले तो एलान हुआ ''बराज़ल इमानो कुल्लहू इललकुफरे कुल्लहू'' ये कुल्ले इमान है जो कुल्ले कुफ़्र के मुकाबले पर जा रहा है। पलटे तो रसूल अल्लाह ने कहा ''ज़रबतो अअलीयिन यौमल ख़नदक अफ़ज़लो मिन ऐबादतिस सक़लैन'' एक ज़रबत इबादते

सकलैन से भारी। मेरी समझ में नहीं आया दो हदीसें क्यों? कुरआन ने कहा है कामयाबी के मेआर दो हैं एक ईमान दूसरे अमल। अगर ईमान कामयाब  बनाए तो ऐसा कामयाब कि ''कुल्ले ईमान'' हो जाये और अगर अमल कामयाबी का मेआर तो वो कैसा कामयाब कि जिसकी एक ज़रबत इबादते सकलैन से भारी हो। चले तो कुल्ले इमान बन के पलटे तो सनद मिली कि एक ज़रबत इबादते सकलैन से वज़्नी है। इबादते सक़लैन से भारी हो। चले तो कुल्ले इमान बन के पलटे तो सनद मिली कि एक ज़रबत इबादते सक़लैन से वज़्नी है। इबादते सक़लैन से भारी है। मैंने नहीं देखा कि अली (अ0) किसी जंग में पैदल गये हो। अली (अ0) जंग में प्यादा गये हों मैंने नहीं देखा। सिवाए एक बद्र के कि बद्र में घोड़े थे ही नहीं। दो घोड़े थे कुल लेकिन अब तो ये जंगे ख़न्दक है इसमें तो घोड़े भी मौजूद हैं।तो क्या रसूल (स0) के लिये ये मुमकिन न था। जहाँ अपनी तलवार दी थी। एक तलवार थी पहले से एक अपनी तलवार दी थी कोई घोड़ा भी दे देते। नहीं पैदल। समझ में नहीं आया पैदल क्यों गये? फिर अम्र घोड़े पर सवार आया। अरे यदुल्लाह तो फरमाते हैं उससे कि तू भी उतर आ। मैंने सुना है कि तूने क़सम खायी है कि मैदाने जंग में तीन बातें अगर कही जायेंगी तो एक ज़रूर मंज़ूर करूँगा। कहा कि ठीक सुना कहा तो पहली बात ये है कि कलमा पढ़ कर मुसलमान  हो जा। ऐ मौला ये क्यों कहा? ये इसलिये कि बहादर है ना क्या बताऊँ? अली (अ0) बहादर की कद्र जानते थे। काफ़िर है मगर बहादर है। अगर आज मुसलमान हो जायेगा तो कल इस्लाम को तकवियत पहुँचेगी। मुसलमान हो जा, क़ाफ़िर है मगर दिल नहीं मानता तो कैसे मुसलमान हो जाये? जानता था कि काफ़िर होना अच्छा है मुनाफ़िक़ न होना चाहिये। दिल नहीं मानता तो कैसे मुसलमान हो जाये। कहा अच्छा तो पलट जा। मैदाने जंग से पलट जा, न लड़। मौला ये क्यों? ये इसलिये कि मोहलत मिल जाये।आज नहीं समझा है मुमकिन है कल समझ जाये। मुमकिन है कल दायर–ए–इस्लाम में आ जाये। मगर वो भी अजीब बहादर था कहता है कि आप ऐसी फरमाइश कर रहे हैं पलट कर जाऊँगा तो औरतों को क्या मुँह दिखाऊँगा। मालूम होता है बहादर ग़ैरतदार भी होता है कि जब मैदान में आ गया था तो ग़ैरत का तकाज़ा नहीं है कि पलट जाये। ये न देखो कि मोमिन है या काफ़िर । ये देखो कि बहादर है या नहीं। जो बहादर होगा वो मैदान से पलटने में शर्म महसूस करेगा। कैसे पलट कर जाऊँ? औरतों को क्या मँह दिखाऊँ? अब तीसरी फ़रमाइश अच्छा तो घोड़े से उतर आ। उतरा और एक ही वार में घोड़े को पै किया। मैं कहता हूँ फिर मौला ये क्यों फरमाइश की। वो सवार था आप क्या लड़ न सकते थे? मगर शायद रसूल (स0) की हदीस की तसदीक़ करना चाहते थे। खुद भी पैदल आये उसको भी प्यादा कर लिया। इसलिये कि जानवर इमान और कुफ्र से मुत्तसिफ नहीं होता। मोमिन, इंसान होता है, काफ़िर इंसान होता है। घोड़ा न काफिर हो सकता है न मोमिन प्यादा थे उसको भी प्यादा किया ताकि कुल्ले ईमान की कुल्ले कुफ्र से टक्कर हो सके।

और इस सिलसिले में आख़री बात अर्ज़ करना चाहता हूँ। मेरी समझ में नहीं आया खुदा के रसूल (स0) ये क्या फ़रमाया आपने कि कुल्ले ईमान और कुल्ले कुफ़्र की टक्कर है, मैं अली (अ0) को कुल्ले ईमान मानता हूँ। मेरा ईमान गवाही देता है कि अली (अ0) कुल्ले ईमान मगर मेरी समझ में नहीं आया कि ये अम्र कुल्ले कुफ़्र कैसे बन गया। अरे अबू जहल होता समझ में आ जाता। अबू लहब होता समझ में आ जाता ये अम्र तो इससे पहले कहीं तारीख में मुझे नाम ही नहीं मिलता। न पत्थर मारने वालों में न अज़ीयत देने वालों में न रसूल (स0) को मक्के से निकालने वालों में कहीं कुफ्र के सिलसिले में नुमायाँ नाम उसका नज़र ही नहीं आया। ये कुल्ले कुफ़्र एक मैदाने खंदक में आकर क्यों कर बन गया। मगर

मेरा दिल कहता है कि जब तक न आया था। अली (अ0) के मुकाबले पर कुल्ले कुफ्र न था अली के मुक़ाबले में आकर कुल्ले कुफ़्र बना। इसलिये कि हर शय अपनी ज़िद से पहचानी जाती है। दिन के मुकाबले में रात, शीरीनी के मुकाबले में तल्ख़ी, अरबी की मशहूर मसल है "तोरफुल अशयाओ बेअज़दादेहा।" हर शय अपनी ज़िद से पहचानी जाती है अगर अली (अ0) के मुक़ाबल में न आता तो कुल्ले कुफ़्र न बनता कुल्ले ईमान से टकराया तो कुल्ले कुफ्र बन गया। गोया रसूल (स0) ने आज ही पहचनवा दिया कि कुल्ले ईमान को मैं पहचनवाए देता हूँ अब टकराने वालों को तुम देख लेना। (सलवात)

बरज़ल ईमानो कुल्लहू इललकुफ्रे। ये कुल्ले ईमान है जो कुल्ले कुफ्र के मुकाबले पर जा रहा है। और अब पलटे अली (अ0) तो इस तरह कि अम्र का सर हाथ में। और वालिदे माजिद फ़रमाया करते थे मैंने उनसे सुना है। अब मैं उस तरह से तो अदा नहीं कर सकता जिस तरह वो अदा करते थे। फरमाते थे बड़ा मशहूर है फ़ुहार में शेर का टहलना। अजीब नाज़ और अंदाज़ होता है कि जब हल्की–हल्की फुवार पड़ रही हो और वो टहल रहा हो तो आज असदुल्लाह टहल रहे थे खून की फुवार पड़ रही थी। इधर जुल्फेकार से खून के कतरे टपक रहे हैं। और उधर खुद आपका सर ज़ख्मी हो चुका है जिससे खून के क़तरे टपक रहे हैं और इस खून की फुवार में अली (अ0) यूँ टहलते हुए नाज़ से आ रहे हैं कि कुछ लोग देख के घबरा गये। कहा खुदा के रसूल (स0) आज तो अली (अ0) किब्र और गुरूर की चाल चल रहे हैं। अरे ये तो मगरूरों की सी चाल है। बस सुन कर रसूल (स0) ने उनसे तो कुछ न कहा। दूसरों से ख़ेताब करके कहा देखना चाहते हो कि जवानाने जन्नत, जन्नत के सब्ज़े पर क्यों कर टहलेंगें अगर देखना हो तो अंदाज़े रफ़तारे अली (अ0) देखो बस यही अंदाज़ होगा यूँही जन्नत में टहेल रहे होंगें। (सलवात) अम्र का सर लाकर रसूल (स0) के कदमों पर डाल दिया कि अब कुफ़्रका सर कभी कदमों से बलन्द नहीं हो सकता और अब रसूल (अ0) ने दूसरी सनद दी। "ज़रबते अली यौमल खनदक अफ़जलो मिन एबादतिस सकलैन" अली (अ0) की एक ज़रबत ख़नदक वाली, जिन्नों इंस की इबादत पर क़यामत तक भारी है।

मैं कहता हूँ मौला ज़रबत लगाना और है खाना और है। ये वज़्न था उस ज़रबत में कि दस्ते यदुल्लाह में हरकत हुई थी और ज़र्ब कुफ़्र के सर पर पड़ी थी और वो ज़रबत कितनी वज़्नी होगी कि जो मस्जिद में हालते नमाज़ में, रमज़ान में नमाज़े सुब्ह के सजदए आखिर में, अली (अ0) के सर पर पड़ रही हो। मगर मैं अर्ज़ करूँगा मौला फिर भी एक ही ज़रबत तो थी और फिर कितने थे कभी हसन (अ0) आगे बढ़े, कभी हुसैन (अ0) आगे बढ़े, कभी मोहम्मदे हानफिया (रज़ी0) एक ज़रबत है और संभालने वाले अठठारह। ऐ आका ज़रा करबला में आ जाइये यहाँ आपका हुसैन तीरों और तलवारों और नैज़ों से टुकड़े–टुकड़े। अजरोकुमअलल्लाह। मुझे नहीं मालूम कि करबला में हुसैन (अ0) के जिस्म पर कितने ज़ख्म थे। अरे जहाँ चार हज़ार सिर्फ कमानदार हों कितने तीर होंगें कम से कम तीस हज़ार सिपाही थे। हर नैज़ा हुसैन के खून का प्यासा। हर तलवार हुसैन के खून की प्यासी कितने ज़ख्म होंगें मगर दोस्तदाराने अहलेबैत (अ0) मेरी दुआ है कि खुदा आपको मोहिब्बाने अहलेबैत (अ0) में शुमार करे हमें उस फ़ेहरिस्त में लिख ले जो हुसैन (अ0) के चाहने वालों की है। ऐ दोस्तदाराने अहलेबैत (अ0) मैं आप से अर्ज़ करता हूँ कि ज़रा हुसैन (अ0) के जाँ निसारों का कारनामा देखिये।

ज़रा हुसैन (अ0) के फ़िदाकारों की जंग का अंदाज़ देखिये। अरे इतने कमानदार तीर लिये हुऐ इतने नैज़े तलवारें और वो हम्ले कि जिसमें पूरे–पूरे लश्कर ने हम्ला किया। पूरे मैमने ने पूरे मैसरे पर हमला किया पूरे मैसरे ने, हुसैन (अ0) के कल्बे लश्कर पर हमला किया और

आखिर एक मरतबा हुक्म दिया कि यूँ तुम ज़ेर नहीं कर सकते पूरा लशकर एक साथ हमला कर दे अरे कहाँ बहत्तर और कहाँ कम से कम तीस हज़ार। मगर दोस्तो सोचो और गौर करो कि ये जाँ निसार कैसे थे मैंने नहीं देखा कि जब तक एक भी ज़िन्दा रहा हुसैन (अ0) के जिस्म पर कोई एक ज़ख़्म आ गया हो। अरे किस तरह बचा रहे थे। अरे किस तरह हिफ़ाज़त कर रहे थे। मैं सच अर्ज़ करता हूँ ये शुजाअत का मोजिज़ा है अंसारे हुसैन (अ0) का और सिर्फ हुसैन (अ0) नहीं बल्कि जब तक अंसार में ज़िन्दा रहा कोई भी अरे बनी हाशिम के किसी बच्चे के कोई ज़ख़्म न आसका। सब अपने को आगे किये हुऐ हम टुकड़े–टुकड़े हो जायें लेकिन अगर इन बच्चों में किसी के कोई ज़ख़्म लग गया तो रसूल (स0) को क्या मुंह दिखायेंगें? जब रसूल (स0) कहेंगें कि तुम ज़िन्दा थे और मेरा बच्चा ज़ख़्मी हो गया? क्या जवाब देंगें।

ऐ जाँनिसाराने इमाम हुसैन (अ0) क्या कहना तुम्हारा। ऐ फ़िदाकाराने इमाम हुसैन (अ0) तुम्हारी शुजाअत एजाज़ की हद में दाख़िल। अरे उन में जवान भी हैं। उनमें बूढ़े भी हैं। उनमें बच्चे भी हैं। आइये देखिये मैं शुजाअत का क्या हाल अर्ज़ करूँ। अरे कुल दस दिन करबला के मसाएब बयान करने के लिये छठी से अब मोअय्यन मसायब आज अली अकबर (अ0) कल कासिम (अ0) परसों अब्बास (अ0) अरे कहाँ कुल पाँच दिन और कहाँ बहत्तर की वफादारियाँ। अरे किस तरह बयान किया जा सकता है कि हुसैन (अ0) के जांनिसारों ने क्योंकर हुसैन (अ0) पर जानें निसार की हैं। कई वफादारियों का मुज़ाहेरा किया है। आइये आज एक बूढ़े का ज़िक्र करूँ। जो बराबर करता रहा यूँ किसी का ज़िक्र छोड़ दूँ मगर ये ज़िक्र नहीं छोड़ता। एक बूढ़ा वो जिसके चेहरे पर झुर्रियां पड़ी हुईं। जिसका रंग स्याह। जिसकी कमर झुकी हुई। आया हुसैन (अ0) की खिदमत में आक़ा मुझे भी इजाज़त दे दिजिये। मेरी इज़्ज़त भी बढ़ा दिजिये रसूल (स0) के सामने मुझे भी सुर्ख़रू कर दिजिये। एक मरतबा हुसैन (अ0) ने सर से पाँव तक वफ़ादार जाँ निसार को देखा और कहा जौन। अरे तुम तो बुढ़ापे में इसलिये आ गए थे कि आख़री उम्र में ज़रा आराम से बसर हो जाये। अब हम तुम्हें आराम नहीं पहुँचा सकते तो नहीं चाहते कि हमारी वजह से ज़ख़्म भी खाओ। जौन खुशी से इजाज़त देता हूँ चले जाओ। कोई जाते देखेगा तो रोकेगा नहीं इससे पहले भी हुसैन (अ0) ने रोका है अपने अंसार को। मगर किसी ने हाथ जोड़े हैं कोई कदमों पे गिरा है। और जौन का अंदाज़! इसीलिये मैं अर्ज़ कर रहा हूँ कि मैं इस ज़िक्र को नहीं छोड़ता। जौन को ज़रा एहसास था। इधर हुसैन (अ0) ने ये कहा और उधर एक मरतबा जौन कहते हैं। फरज़न्दे रसूल क्या इसलिये इजाज़त नहीं दे रहे हैं कि मैं। हब्शी गुलाम हूँ। मैं नहीं चाहता कि ज़िक्र छोड़ दूँ कि जौन को शिकायत हो कि अली अकबर (अ0) व अब्बास (अ0) के मुकाबिल में मेरा ज़िक्र कौन करता। क्या आप इसलिये इजाज़त नहीं दे रहे हैं कि मैं हब्शी गुलाम हूँ? मेरा रंग स्याह है। मेरी रगों में हब्श का खून है। मगर कहते है। फरज़न्दे रसूल (स0) जब तक मैं अपने हब्शी खून को बनी हाशिम के खून में मिला न लूँगा चैन न लूँगा। ये सुना हुसैन (अ0) आगे बढ़े। बूढ़े गुलाम को गले से लगाया। ऐ जौन ये ख़याल नहीं अरे जाओ मैंने इजाज़त दे दी आये मैदाने जंग में। अरे बूढ़े हैं। कमर झुकी हुई। मगर जोशे शुजाअत। जंग की। जंग करके ज़ख़्मी होकर गिरे। आवाज़ दी हुसैन (अ0) को। अब्बास (अ0) को नहीं भेजा। अली अकबर (अ0) को नहीं भेजा। खुद हुसैन (अ0) बढ़े। और मैं सच अर्ज़ करूँगा कि जैसे कल कह चुका हूँ हर एक का सर नहीं उठाया हुसैन ने। हर एक का सर ज़ानू पर नहीं रखा। मगर ये जौन की खुसूसियत। एक मरतबा आगे बढ़े सर उठाया। ज़ानू पर रखा खैर ज़ानू पर सर अब्बास (अ0)

**(बकिया पेज नं0 16 पर .........)**

तो कब का सवाल ही खत्म हो जाएगा।

मैं अपने तमाम मुसलमान भाईयों से चाहे वो शिया भाई हों चाहे वो मेरे सुन्नी भाई हों, यह पूछना चाहता हूँ कि यह अज़ानों में 'अशहदो अन ला इलाहा इल्ललल्लाह....कब तक होता रहेगा? भई कोई हद होती है। पन्द्रह सौ साल हो चुके हैं और दिन में पांच मरतबा आवाज़ बलन्द हो रही है "अशहदो अन ला इलाहा इलल्लाह"। आखिर यह कब तक होता रहेगा कि मैं गवाही देता हूँ कि अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं है, अल्लाह के अलावा कोई खुदा नहीं है। कब तक होता रहेगा ये? तो सारे मुसलमान सुन्नी और शिया मिलकर जवाब देंगे कि भाई अश्हदो अन ला इलाहा इल्ललाह' कम से कम उस वक्त तक तो होता ही रहेगा जब तक बुत खानों में बुत (Idols) मौजूद हैं।

जब तक महन्त इनसानों के पेशानियों को बुतों के सामने झुकाते रहेंगे, उस वक़्त तक इन्सानों की ज़मीर को बेदार करने के लिए मजबूर हैं कि 'अशहदो अन ला इलाहा इलल्लाह' यानि सजदा करना है तो सिर्फ अल्लाह का करो, पेशानी झुकाना है तो सिर्फ अल्लाह के सामने झुकाओ। ग़ैरे खुदा के सामने पेशानी मत झुकाओ। यह सब माबूदाने बातिल (Fals Gods)हैं।

मेरे अज़ीज़ो जब तक मन्दिरों में बुत (Idols ) रहेंगे हम "अशहदो अन ला इलाहा इलल्लाह" कहने के लिए मजबूर हैं। इसी तरह जब तक दरबारों में, PARLIAMENTSमें SENATES में कांग्रेस में BUT NOT INDIAN NATIONAL CONGRESS वो तो बहुत छोटी सी कांग्रेस है। एक और कांग्रेस (congress) है वाशिंगटन में है, जिसमें वह ज़ालिम और जाबिर बैठे हुये हैं जो कभी मुलूकियत (MONARCHY) की अबा पहेन लेते है और कभी जमहूरियत (Democracy) का लेबास पहन लेते हैं।

अगर मकसद सिर्फ एक होता है कि ग़रीबों को पनपने दो, कमज़ोरों को उठने ना दो, कमज़ोरों का खून चूसो। हर जगह जम कर बैठ जाओ। इंसान वही है जो हमारी गुलामी करे। जो हमारी गुलामी करने से इनकार कर दे वह इंसान नहीं है। तो जब तक ये अनासिर (Elements) मौजूद हैं, उस वक्त तक करबला का ज़िक्र ज़रूरी है। इसलिए कि करबला मज़लूम (Oppressed) की ताक़त का नाम है। करबला ऐटम (Atom)की ताक़त का नाम नहीं है, ईमान की ताक़त का नाम है।

☐ ☐ ☐

**(पेज नं0 13 का बकिया,..........)**

का भी रख लिया था। मगर अब एक और अंदाज़ नज़र आया अब जो जौन ने आंखें खोलीं तो देखा आक़ा अपना रूखसारा रूखसारे से मिला रहे हैं। हुसैन (अ0) अपने रूखसारे को जौन के रूखसारे को मिलाते जाते हैं और दोआ करते जाते हैं। ऐ पालने वाले जौन को ख़याल था कि उसका रंग स्याह है। पालने वाले रंग को नूर से बदल दे जिस्म को खुशबू से मुअत्तर कर दे। हाँ आऐ ज़ैनुल आबेदीन (अ0) दफ़न करने के लिये।

बनी असद ने कहा मौला यूँ तो सभी की लाशों से नूर निकल रहा है सभी की लाशें मोअत्तर हैं मगर ये किस की लाश है कि नूर आसमान तक बलन्द होकर जा रहा है जिसकी खुशबू से जंगल महक रहा है, कहा ये गुलामे अबूज़र जौन की लाश है और ये मेरे बाबा की दोआ का असर है।

मैं कहता हूँ आक़ा जौन का सर ज़ानू पर रख लिया शायद इसीलिये फातेमा (अ0) जन्नत से आयी होंगीं ऐ बेटा, तेरा सर भी तो हो किसी के ज़ानू पर। कोई और नहीं मेरा ज़ानू हो और तेरा सर जुदा हो रहा हो।